11. प्रमुख वैदिक देवताओं के वर्गीकरण के अनेक प्रयास किये गये हैं जिनमे सर्वप्रथम और सम्भवतः सर्वोत्तम वर्गीकरण यास्क का है जिन्होने देवताओं को पृथ्वी अंतरिक्ष और आकाश के किसी न किसी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने के कारण तीन श्रेणियों मे विभक्त किया है। —

(I) आकाश देवता (द्युस्थान देवता) — द्यौस, वरुण, मित्र, सूर्य, उषस, अश्विन (सम्भवतः गोधुली और उषा काल के तारे) आदित्य, विष्णु (सम्भवतः प्रकृति की सबसे चमकीली वस्तु अर्थात सूर्य के प्रतीक

नोट (I) आकाश देवता के सर्वश्रेष्ठ देवता वरुण था वह उषा और सूर्य पर नियंत्रण करता था उन्हे असुर भी कहा जाता था वह अपने दूतो के द्वारा प्रकृति पर भी नियंत्रण करता था। वह जल, समुद्र, बादल इत्यादि पर नियंत्रण करता था। वह पापियों को अपने पास बांधने का काम करता था

(II) अंतरिक्ष देवता — इन्द्र, रुद्र (सम्भवतः विद्युत), मारुत, वायु, पर्जन्य

नोट – अंतरिक्ष देवता के सर्वश्रेष्ठ इन्द्र थे

(III) पृथ्वी वासी देवता (पार्थिव) पृथ्वी अग्नी, सोम, बृहस्पति (प्रार्थना) इत्यादि –

नोट (I) पृथ्वीवासी देवता मे सर्वश्रेष्ठ अग्नि थे

नोट – वैदिक देवताओं में किसी प्रकार का बड़े और छोटे का भेद नही है। यह बात अवश्य है कि कुछ देवताओं का वैदिक मंत्रो मे अन्य देवताओं की अपेक्षा अधिक उल्लेख हुआ है। यद्यपि भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न भिन्न देवताओं को प्रधान जरूर बना दिया गया है लेकिन अनेक सूक्तो से यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी देवता समान थे।

12. ऋत ➤

(I) ऋग्वेद के प्राप्त अवधारणाओं के अनुसार प्राच्य विद्या के प्रारम्भिक चरणो मे मैक डोनाल्ड, कीथ इत्यादि सभी ने ऋत की व्याख्या "सृष्टि की नियमितता," भौतिक एवं "नैतिक व्यवस्था" अंतरिक्ष एवं नैतिक व्यवस्था " इत्यादि रूपो मे की है किन्तु वस्तुतः यह तो इस अवधारणा का एक ही पहलु है।

(II) इस संदर्भ मे एक द्रष्टव्य विवरण यह है कि ऋग्वेद के मंत्र द्रष्टाओं ने ऋत के ह्रास पर आंसु बहाए हैं और उसके पुनरुत्थान की कामना व्यक्त की

उत्तर वैदिक काल के साहित्य मे तो ऋत पूर्ण रूप से लुप्त हो चुका था यदि ऋत का अर्थ केवल भौतिक नैतिक तथा अंतरिक्षीय व्यवस्था मात्र होता तो उसके ह्रास पर आंसु न बहाए जाते।

(iii) ऋत के वास्तविक अर्थ को समझने के लिए अक्ष (पासा) के साथ उसके सम्बन्ध के चर्चा भी अनुचित न होगी कहा गया है कि पासा खेलकर ऋत को रक्षा एवं स्थापना होती है क्योंकि इस प्रतिक के माध्यम से इस बात पर बल दिया गया है कि जीस प्रकार पासे को मुठी मे बन्द करके नही रखा जा सकता और सभी के सामने खुले हाथो से फेंका जाता है, उसी प्रकार सम्पती की सामुहिकता के द्वारा न्याय एवं ऋत की स्थापना होती है।

(iv) ऋग्वेद से प्राप्त ऋत की अवधारणा कबायली समाज की अनुरूप थी, जब कालान्तर मे समाज वर्ण एवं वर्गो मे विभाजीत हो गया और लोगो मे लालच, ईर्ष्या, स्वार्थ और फुट की भावना ने घर कर लिया तो ऋत का ह्रास हो गया। और यही कारण है कि ऋग्वैदिक काल मे वरुण को जहाँ ऋतस्यगोपा (ऋत का रक्षक) कहा जाता था वही उत्तर वैदिक काल मे वरुण की महत्ता का पतन हो गया है

13. वैदिक आर्य लोग पूजा क्यों करते थे ?

— वैदिक आर्य लोग आत्मिक एवं अध्यात्मिक अथवा परलौकिक समस्याओं के लिए पूजा नही करते थे बल्की पुत्र, पशु, एवं स्वास्थ की प्राप्ती के लिए पूजा किया करते थे

14. पूजा की विधि

— पुजा स्तुती पाठ द्वारा व्यक्तिगत या सामुहिक होता था समान्यत: हर कबीले या गोत्र का अपना-अपना कुला देवता होता था। इन्द्र और अग्नि समस्त जन द्वारा दी गयी बली ग्रहण करने के लिए आहूत होते थे बली या यज्ञाहुती मे शाक जौ इत्यादि वस्तुए दी जाती थी परन्तु ऋग्वैदिक काल मे ये वस्तुए चढ़ाते समय कोई अनुष्ठानीक या याज्ञिक मन्त्र नही पढ़े जाते थे उनादिनो शब्द के किसी जादुई असर का होना उतना नही माना जाता था जितना उत्तर वैदिक काल मे माना जाने लगा।

नोट — ऋग्वैदिक काल मे स्तुती पाठ पर अधिक जोर था।

15. ऋग्वेद के कुछ स्थानो पर विशेषकर उसके प्राप्तो

काल के मंडलों के एकेश्वर वाद के चिन्ह भी दृष्टिगोचर होते हैं एकेश्वर वाद की इस पिपासा की सिद्धि शायद कबायली जीवन के आगे भाव और ह्रास हो सकती है ऐसे क्योंकि जैसा कि हम जानते हैं कि कबीले बड़ी-बड़ी इकाईयों में विलीन होकर एक राष्ट्र बनते जा रहे थे।

नोट (i) ऋग्वेद के प्रारम्भिक चरणों में विभिन्न देवताओं को बारी-बारी से सर्वोच्च स्थान दिया गया फिर युगल देवताओं को स्थान दिया गया और अन्ततः एकेश्वरवाद एवम अद्वैत वाद का आभास मिलता है।

(ii) ऋग्वैदिक काल में गणचिन्हात्मक (टोटम सम्बन्धित) अवस्थाओं के प्रचलन का अभाव मिलता है।

//